आँचलिक उपन्यास : संरचना के नए आयाम

✧ डॉ. रेखा मिश्रा

हिन्दी उपन्यास ने अपनी विकास यात्रा में कई पड़ाव डाले है। उपन्यास कभी व्यष्टि की ओर झुका है तो कभी समष्टि की ओर। तिलस्मी ऐय्यारी उपन्यासों के युग से लेकर आज तक उपन्यासों ने कथानक और नायक विहीन तथा परिवेश प्रधान उपन्यास तक एक दीर्घ यात्रा तय की है जिसके भीतर कई परिवर्तन समाहित है। इन्हीं में आंचलिक उपन्यास भी विशिष्ट स्थान रखते हैं। आंचलिक उपन्यास, विशिष्ट ग्रामांचलों, दूरदराज स्थित भू–भागों के जीवन का समग्र चित्रण है। यही कारण है कि मैला आँचल से पूर्व के उपन्यास गांवों से जुड़े हुए होते हुए भी आंचलिक नहीं थे। इन उपन्यासों में सामान्य गांवों की सामान्य घटनाओं का चित्रण किया गया है। वैसे देखा जाय तो प्रेमचन्द के उपन्यासों में भी गांवों का वर्णन हुआ है। इन उपन्यासों में वर्णित गांव उपन्यास की कथा की प ष्ठभूमि के रूप में आया है। यहां आँचलिकता व स्थानीय रंगत का संस्पर्श ही द ष्टिगत होता है। हिन्दी के आंचलिक उपन्यास का जन्म क त्रिमता एवं बासीपन से ऊब कर हुआ है। आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी ने आंचलिक उपन्यासों के उद्भव के सन्दर्भ में लिखा है ''जब सामाजिक उपन्यास में नागरिक जीवन को चित्रित कर करके उपन्यासकार थक गये और जब पाठकों का समुदाय उन घिसे पिटे और अंशतः रूढ़ नागरिक चित्रणों से ऊब उठा तब नये अज्ञात जीवन और दूरवर्ती प्रदेशों के अपरिचित क्षेत्रों से संबंधित उपन्यास लिखे गए। इसलिए ये उपन्यास विशेष सामान्य नागरिक जीवन या नागरिक जीवन की प्रतिच्छवि नहीं बनना चाहते है। इन आँचलिक उपन्यासों में नये अनुभव और द ष्टि के साथ नए रचना विधान का प्रारम्भ हुआ। आंचलिक उपन्यासों में देश के अपरिचित और पिछड़े क्षेत्रों के उपेक्षित जीवन की समस्याओं, विषमताओं, आशाओं, आकांक्षाओं, अशिक्षा और गरीबी से उत्पन्न विसंगतियों को चित्रित किया गया। इस आँचलिक परिवेश की विविध मानवीय संवेदनाओं को दर्शा कर इन उपन्यासकारों ने पाठकों का ध्यान खींचा।

आंचलिक उपन्यासकार जनपद विशेष के जीवन के बीच जिया होता है या कम से कम समीपी से देखा हुआ होता है। वह विश्वास के साथ वहाँ के पात्रों, वहाँ की समस्याओं, वहाँ के प्राक तिक और सामाजिक परिवेश के समग्र रूपों परम्पराओं और प्रगतियों को अंकित कर सकता है क्योंकि उसने उन्हें अनुभूति में उतारा है। आँचलिक उपन्यास लिखना मानो हृदय में किसी प्रदेश की कसमसाती हुई जीवनानुभूति को वाणी देने का अनिवार्य प्रयास है। इन रचनाकारों ने अंचल की समग्रता को उसके सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्क तिक आयामों से जुड़े विविध पक्षों, जीवन संघर्षों, मूल्य विघटन, मानवीय संबंध एवं उनके पारस्परिक अन्तर्विरोधों को सहजता और स्वाभाविकता के साथ अभिव्यक्त किया है। आंचलिक उपन्यास स्वतन्त्रता परवर्ती काल में औपन्यासिक रचना के क्षेत्र में आया महत्वपूर्ण परिवर्तन है। डॉ० रामदरश मिश्र के अनुसार इन उपन्यासों में आये ''अंचल के जटिल जीवन चित्र को अंकित करने के लिए लेखक कहीं मोटी रेखाएं खींचता है, कही पतली, अवकाशों को भरने के लिए दो–चार बिन्दु अपनी तूलिका से झाड़ देता है। अनेक पर्वों, उत्सवों, परम्पराओं, विश्वासों, व्यथा के अवसरों, गीतों, संघर्षों, प्रक ति के रंगों, पुराने नए जीवन मूल्यों, जातियों आदि से लिपटा हुआ अंचल का जीवन अभिव्यक्ति के लिए नये माध्यम की अपेक्षा करता है।

औपन्यासिक संरचना में विविध तत्त्व एक दूसरे से गुंथे हुए रहते है जिस प्रकार फूल की सुगंध को बनाने में बीज, धरती, खाद, पानी, हवा, धूप सब मिलाकर पौधे का निर्माण करते है और पौधों की टहनी, जड़, पत्तियां, फूल, पंखुडियों सब को मिलाकर ही फूल की सुगन्ध बनती है इसी प्रकार उपन्यास की संरचना में कथानक, पात्र, संवाद आदि विभिन्न कथा तत्त्वों की पारस्परिक अविभाज्यता में ही आंचलिक उपन्यासों की सम्पूर्णता निहित है, औपन्यासिक संरचना की संश्लिष्टता और अविभाज्यता को एलेन टेट ने इस प्रकार व्यक्त किया है– उपन्यासकार विषय और उसकी संरचना दोनों को इस कोटि तक सतत् अविभाज्य सामने रखते है कि आलोचक उसकी प्रधानता–अप्रधानता तथा प्राथमिकता बोध कदापि नहीं पा सकता। आंचलिक उपन्यास की गति एक दिशा में नहीं चारों दिशाओं में होती है। वह स्थान की अपेक्षा समय में जीता है। लेखक कभी इस कोण पर खड़ा होता है, कभी उस कोण पर, कभी ऊंचाई पर, कभी नीचाई पर। इसमें अनेक पात्रों की आवश्यकता रहती है। हर पात्र की सत्ता महत्व की है। इनमें से कोई पात्र एक–दूसरे के निमित्त नहीं होता, वे अब अंचल के निमित्त होते हैं। इस उद्देश्य को न समझ पाने के कारण ही लोगों को कथानक का, पात्रों का सांस्क तिक पक्षों का बिखराव दीखता है, उनमें एक सूत्रता और एक दिशागामिता नहीं दीखती। अंचल की समग्रता का उद्घाटन ही संरचना के विविध तत्वों का निर्माण कार्य होता है। आंचलिक उपन्यासों का कथानक आदि और अन्त के पारम्परिक अनुशासन से भी भिन्न है। नवीन कथा विन्यास जीवन की समग्रता से निर्मित होकर भी किसी पारम्परिक नियमों से अनुशासित नहीं होता है। आंचलिक उपन्यासों की कथावस्तु अंचल के भावबोध, जीवन संघर्ष, मूल्य टूटन, अंतर्विरोध चेतना और सांस्क तिक अवमूल्यन को अपना विषय बनाते है।

आंचलिक उपन्यासों में पात्रों की संरचना अन्य उपन्यासों के पात्रों से भिन्न होती है। आंचलिक उपन्यासों में परिवेश के निमित्त पात्रों की स ष्टि होती है। इन उपन्यासों के पात्र आंचलिक परिवेश को एवं उसकी विविधता के साथ अंचल के जीवन को, समग्रता से उद्घाटित करते है। आंचलिक उपन्यासों में सामान्य उपन्यासों की तुलना में पात्रों की संख्या अधिक होती है। इन उपन्यासों में आंचलिक जीवन के विविध पक्षों को उद्घाटित करने वाले विभिन्न वर्गों, विविध स्वभावों और भिन्न–भिन्न स्तर के पात्रों की संरचना करनी पड़ती है। कुछ पात्र अंचल के आर्थिक जीवन से जुड़े होते है,

प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, श्री खण्डेलवाल वैश्य पी.जी.महिला महाविद्यालय, जयपुर

कुछ धार्मिक, सामाजिक और सांस्क तिक पक्षों से जुडे होते हैं। इस प्रकार कई पात्र वर्तमान जीवन की विसंगतियों, जटिलताओं, कुंठाओं के और कई पात्र जातिवाद, दलबन्दी, यौन भ्रष्टाचार और रूढ़िवादी परम्पराओं को बढ़ाने वाले प्रतीक के रूप में उपन्यासों में चित्रित होते है। ''आंचलिक उपन्यासों के पात्रों के चरित्रों में महत्व सामान्य पात्रों का ही होता है। परन्तु असामान्य पात्र सामान्य पात्रों के हल्के रंगों में अपने तेज रंगों द्वारा सुन्दर रूपाक तियों का निर्माण करके आंचलिक जीवन का सुन्दर चित्र पूर्णता से एवं प्रभावशाली ढंग से उपस्थित करते हैं। यद्यपि आंचलिक उपन्यासों का महत्व सामान्य पात्रों के चित्रण पर आधारित होता है तथापि उसका सौन्दर्य और उपन्यासकार की कला के दर्शन असामान्य अथवा विशिष्ट पात्रों में ही होता है। आंचलिक उपन्यासों में रचनाकार पात्रों का निरूपण आंतरिक और बाह्य दोनों स्तरों पर सूक्ष्मता के साथ करता है पात्रों की मनःस्थिति, उनके अन्तर्द्वन्द्व, उनकी अकुलाहट को परिस्थितियों के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है। इन उपन्यासों में पात्र आंचलिकता के उद्घाटनार्थ उल्लेखित होते है। ''आंचलिक उपन्यासकार के पात्रों के रूपाकार में स्थानीय विशेषता और बहिरंग में स्थानीय वेश–भूषा की अनिवार्यतः परिलक्षित होती है। इन पात्रों में अंचल का अंतरंग आत्म और बाह्य जीवित रूपाकार का ही मानवीकरण होता है। इसलिए वे जीवित और चेतन होते है। उपन्यास में अंकित जीवन को वे स्वयं जीते है। केवल प्रतिनिधित्व ही नहीं करते, वरन् उसे गति भी प्रदान करते है।'' इन उपन्यासों में न कोई नायक होता है न खलनायक। यहां कई पात्र आदि से अन्त तक आवश्यक होते है तो कुछ पात्र थोडे से समय के लिए। उपन्यास में अवधि किसी पात्र को विशिष्ट या सामान्य नहीं बनाती। अतः कहा जा सकता है कि पात्र संरचना की द ष्टि से आंचलिक उपन्यासों ने कथा साहित्य के कई विशिष्ट पात्र निर्मित किए है जो विभिन्न अंचलों की सांस्क तिक पहचान के साथ मानवीय एवं सामाजिक सरोकारों के नये मूल्यों के स जन की तलाश में है। उपन्यास में वातावरण का विशिष्ट रूप उसमें आंचलिकता का निर्माण करता है। यह परिवेश आंचलिक उपन्यासों में पूरी तरह व्याप्त ही नहीं रहता अपितु अन्य औपन्यासिक तत्वों को भी प्रभावित करता है। इन उपन्यासों में भौगोलिक परिवेश के बाहरी स्वरूप को चित्रित करने के साथ साथ अंचल की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, नैतिक और सांस्क तिक परिस्थितियों का भी समग्रता से चित्रण हुआ है। पश्चिमी विद्वान एच. बी. लेपरोथ ने अपनी पुस्तक 'दि आर्ट आफ दि नॉवलिस्ट'में परिवेश विधानकी महत्ता प्रतिपादित करते हुए लिखा है, ''यथार्थ की प्रतीतिके लिए उपन्यास में वातावरण एवं देशकाल की स ष्टि आवश्यक होती है। यह वह धरातल है जिसमें पात्र उत्पन्न होते हैं, वह वातावरण है जिसमें वे सांस लेते हैं, वह माध्यम है जो उन्हें जीवित रखता है, उन्हें आच्छादित करता है। उनका लालन–पालन तथा नियन्त्रण करता है तथा उनके रहन–सहन के ढंग का नियोजन करता है।''

आंचलिक उपन्यासों ने जनभाषा के नये प्रयोग की संभावनाओं को जन्म दिया। आंचलिक संदर्भों से भाषा में नई अर्थवक्ता आई है। आंचलिक उपन्यासों की भाषिक संरचना में आये बदलाव अंचलों की बहुआयामी जीवन की जटिलताओं को व्यक्त करने के लिए आवश्यक थे। अंचलों के संश्लिष्ट जीवन की संवेदना को बिम्बात्मकता, अलंकारिकता, प्रतीकात्मकता, ध्वन्यात्मकता, लोक–गीत, लोक–कथा, लोकोक्तियों के माध्यम से व्यक्त किया गया है। भाषा, स्थान विशेष के लोगों के संस्कारों, उनकी अनुभूतियों से गहरे से जुड़ी होती है। अतः उस स्थान विशेष की आन्तरिकता की संवेदनात्मक तस्वीर पूरी सहजता से अंकित हो पाती है। आंचलिकता की प्रव त्ति भावना की भूमि पर प्रतिष्ठित होती है, क्योंकि आंचलिक उपन्यासकार अंचल की गहन जानकारी से प्रेरित होकर उसे गहराई से उद्घाटित करने की कामना से रचना करता है। परिणामस्वरूप विभिन्न औपन्यासिक तत्व आंचलिक निरूपण के अधीन हो जाते हैं। आंचलिक शैली की ही विशेषता है कि आंचलिक रंग सभी तत्वों को रंजित करके उन्हें अंचलोन्मुख कर देते हैं। सफलतापूर्वक ऐसा कर पाने में ही आंचलिक उपन्यासकार की कला है। इस कला की सिद्धि के लिए आंचलिक उपन्यासकार औपन्यासिक तत्वों की विशिष्ट रीति से संयोजना करता है, जिससे आंचलिक उपन्यासों की प्रक ति ही बदल जाती है।'' 'रेणु' के 'मैला आंचल' और 'परती : परिकथा' उपन्यासों में बिम्बों, प्रतीकों, रंगों, ध्वनियों के प्रयोग से भाषिक संरचना को बेजोड़ बनाया है। रांगेय राघव का 'कब तक पुकारूं, शिव प्रसाद सिंह का 'अलग–अलग वैवरणी', रामदरश मिश्र का 'जल टूटता हुआ', जगदीश चन्द्र का 'धरती धन न अपना' आदि उपन्यासों के भाषिक रचाव में आंचलिकता के नवीन प्रयोग भाषा को नई अर्थवत्ता प्रदान करते है। इस प्रकार आंचलिक उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में नये द ष्टि विन्यास को प्रस्तुत किया है। यहां अंचल के जीवन को उभारने के साथ–साथ नये स जनात्मक आयाम प्रस्तुत किये गये है। डॉ० शिवप्रसाद सिंह आंचलिकता की प्रव त्ति को स्वातंत्र्योत्तर हिन्दुस्तान की एक सांस्क तिक प्रव त्ति मानते हैं, जिसके भीतर भारतीयता को अन्वेषित करने की सूक्ष्म अंतःधारणा काम कर रही है। डॉ० रामदरश मिश्र के अनुसार, ''आंचलिक उपन्यास का उद्देश्य स्थिर स्थान पर गतिमान समय में जीते हुए अंचल के समग्र पहलुओं को उदघाटित करना है।'' ये सभी तत्व कहीं अकेले, कही समूह में अवसर पाते ही कहीं व्यंग्य से, कहीं बिम्ब से, कहीं ध्वनि से, कहीं प्रतीक से, कहीं संकेत से, कहीं नाटकीयता से, कहीं लोक–उपादानों से, कहीं घटना–प्रसंगों से, कहीं पारस्परिक संवादों से, कहीं बहसों से, कहीं संभाषण से, कहीं प्राक तिक छटा से, कहीं प्राक तिक प्रकोप से, कहीं बीमारी से, कहीं धरती की पीड़ा से तो कहीं आदमी की परेशानी और मजबूरी से लेखन के द ष्टिकोण को रूपायित करते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ :

1. रामदरश मिश्र : हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा
2. डॉ० शिव प्रसाद सिंह : आधुनिक परिवेश और नवलेखन
3. डॉ० आदर्श सक्सेना : हिन्दी के आंचलिक उपन्यास और उनकी शिल्पद ष्टि
4. डॉ० विवेकी राय : स्वातंत्र्योत्तर साहित्य और ग्राम जीवन